International Journal For Applied Research in Science and Engineering
Volume 5 Issue 3 October-2022 ISSN (Online): 2456-124X

स्वतंत्रता के बाद भारत में आर्थिक नियोजन: नीतियाँ, चुनौतियाँ और विकास का समालोचनात्मक अध्ययन

डॉ. अनुपम मित्र
सहायक आचार्य
इतिहास विभाग
राजकीय महाविद्यालय, स्वार, रामपुर(उ.प्र.)

सारांश

स्वतंत्रता के पश्चात भारत ने आर्थिक पुनर्निर्माण, सामाजिक न्याय और संतुलित विकास के उद्देश्य से नियोजित आर्थिक प्रणाली को अपनाया। औपनिवेशिक शासन से विरासत में मिली कमजोर आर्थिक संरचना, निम्न औद्योगिक विकास, कृषि पर अत्यधिक निर्भरता तथा व्यापक गरीबी ने एक संगठित विकास रणनीति की आवश्यकता को स्पष्ट किया। इस संदर्भ में पंचवर्षीय योजनाओं के माध्यम से संसाधनों का सुनियोजित उपयोग, उत्पादन वृद्धि, रोजगार सृजन और क्षेत्रीय संतुलन स्थापित करने का प्रयास किया गया। मिश्रित अर्थव्यवस्था के मॉडल ने सार्वजनिक और निजी क्षेत्रों के समन्वय को बढ़ावा दिया। साहित्य समीक्षा से स्पष्ट होता है कि नियोजन ने भारत को प्रारंभिक स्थिरता और औद्योगिक आधार प्रदान किया, किंतु इसके साथ ही प्रशासनिक अक्षमता, असमान वितरण और सीमित प्रभावशीलता जैसी चुनौतियाँ भी सामने आईं। 1991 के बाद उदारीकरण के साथ नियोजन की प्रकृति में परिवर्तन आया, जिससे आर्थिक विकास की गति में वृद्धि हुई। इस प्रकार, आर्थिक नियोजन भारत के विकास का एक महत्वपूर्ण आधार रहा है, जिसकी उपलब्धियों और सीमाओं का संतुलित मूल्यांकन आवश्यक है।

कुंजी शब्द: आर्थिक नियोजन, पंचवर्षीय योजना, मिश्रित अर्थव्यवस्था, उदारीकरण, विकास

1. परिचय

स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात भारत एक ऐसे ऐतिहासिक मोड़ पर खड़ा था जहाँ उसे न केवल औपनिवेशिक शोषण से विरासत में मिली आर्थिक विषमताओं का सामना करना था, बल्कि एक न्यायपूर्ण, समतामूलक और आत्मनिर्भर समाज की स्थापना का भी लक्ष्य निर्धारित करना था। औपनिवेशिक शासन के दौरान भारत की अर्थव्यवस्था का ढांचा मुख्यतः कच्चे माल के निर्यात और

विदेशी उत्पादों के आयात पर आधारित था, जिससे देश में औद्योगिक विकास का अभाव और कृषि क्षेत्र की दयनीय स्थिति उत्पन्न हुई। इस पृष्ठभूमि में आर्थिक नियोजन को एक अनिवार्य साधन के रूप में देखा गया, जो देश के संसाधनों का समुचित उपयोग कर व्यापक विकास सुनिश्चित कर सके।

आर्थिक नियोजन का उद्देश्य केवल उत्पादन में वृद्धि करना नहीं था, बल्कि इसका लक्ष्य सामाजिक न्याय, समान अवसर और क्षेत्रीय संतुलन स्थापित करना भी था। इसी कारण स्वतंत्र भारत के नीति-निर्माताओं ने एक ऐसी रणनीति अपनाई जिसमें राज्य की सक्रिय भूमिका के माध्यम से विकास को नियंत्रित और निर्देशित किया जा सके। प्रस्तुत शोध-पत्र के इस भाग में आर्थिक नियोजन की आवश्यकता, उसके ऐतिहासिक संदर्भ, उद्देश्य तथा समालोचनात्मक दृष्टिकोण को विभिन्न उपशीर्षकों के माध्यम से विस्तार से प्रस्तुत किया जा रहा है।

1.1 स्वतंत्रता के समय भारत की आर्थिक स्थिति

1947 में जब भारत स्वतंत्र हुआ, तब उसकी अर्थव्यवस्था अत्यंत कमजोर और असंतुलित थी। ब्रिटिश शासन के लगभग दो शताब्दियों के दौरान भारतीय संसाधनों का निरंतर दोहन हुआ, जिसके परिणामस्वरूप देश में औद्योगिक आधार नगण्य रह गया और कृषि क्षेत्र अत्यधिक दबाव में आ गया। कृषि पर अत्यधिक निर्भरता, कम उत्पादकता, पारंपरिक तकनीकों का प्रयोग और बार-बार आने वाले अकालों ने ग्रामीण अर्थव्यवस्था को कमजोर बना दिया था।

इसके अतिरिक्त, औद्योगिक क्षेत्र में भी विकास का अभाव था। देश में भारी उद्योगों, मशीन निर्माण और आधारभूत ढांचे का लगभग न के बराबर विकास हुआ था। परिवहन, संचार और ऊर्जा जैसे क्षेत्रों की स्थिति भी अत्यंत पिछड़ी हुई थी। बेरोजगारी और गरीबी व्यापक रूप से फैली हुई थी, जिससे सामाजिक असमानता और आर्थिक विषमता में वृद्धि हुई।

इस परिस्थिति में यह स्पष्ट हो गया कि यदि भारत को एक सशक्त राष्ट्र के रूप में उभरना है, तो उसे एक संगठित और योजनाबद्ध विकास प्रक्रिया अपनानी होगी। यही कारण था कि स्वतंत्रता के तुरंत बाद आर्थिक नियोजन को एक केंद्रीय नीति के रूप में स्वीकार किया गया।

1.2 आर्थिक नियोजन की आवश्यकता और औचित्य

स्वतंत्र भारत के सामने सबसे बड़ी चुनौती यह थी कि वह सीमित संसाधनों के साथ अधिकतम विकास कैसे सुनिश्चित करे। इस संदर्भ में आर्थिक नियोजन एक प्रभावी उपकरण के रूप में उभरा, जिसके माध्यम से संसाधनों का प्राथमिकता के आधार पर आवंटन किया जा सकता था। नियोजन के माध्यम से सरकार यह सुनिश्चित कर सकती थी कि विकास के लाभ समाज के सभी वर्गों तक पहुँचें।

आर्थिक नियोजन का एक प्रमुख औचित्य यह भी था कि यह क्षेत्रीय असमानताओं को कम करने में सहायक हो सकता था। भारत जैसे विशाल और विविधतापूर्ण देश में विभिन्न क्षेत्रों के बीच विकास का स्तर अलग-अलग था। नियोजन के माध्यम से पिछड़े क्षेत्रों के विकास पर विशेष ध्यान दिया जा सकता था।

इसके अतिरिक्त, आर्थिक नियोजन सामाजिक न्याय की अवधारणा को भी सशक्त करता है। यह केवल आर्थिक वृद्धि तक सीमित नहीं रहता, बल्कि शिक्षा, स्वास्थ्य, रोजगार और सामाजिक सुरक्षा जैसे क्षेत्रों में भी सुधार लाने का प्रयास करता है। इस प्रकार नियोजन एक समग्र विकास दृष्टिकोण को प्रस्तुत करता है।

1.3 नियोजन के उद्देश्य और लक्ष्य

भारत में आर्थिक नियोजन के प्रमुख उद्देश्य बहुआयामी थे। सबसे पहले, देश की आर्थिक वृद्धि को तेज करना और उत्पादन के स्तर को बढ़ाना आवश्यक था। इसके लिए कृषि और औद्योगिक दोनों क्षेत्रों में सुधार लाने की आवश्यकता थी। कृषि में उत्पादकता बढ़ाने और खाद्यान्न सुरक्षा सुनिश्चित करने पर विशेष बल दिया गया, जबकि औद्योगिक क्षेत्र में आत्मनिर्भरता और तकनीकी विकास को प्राथमिकता दी गई।

दूसरा महत्वपूर्ण उद्देश्य रोजगार के अवसरों का सृजन करना था। बढ़ती जनसंख्या के कारण बेरोजगारी एक गंभीर समस्या बन चुकी थी। नियोजन के माध्यम से विभिन्न क्षेत्रों में निवेश बढ़ाकर रोजगार के अवसर उत्पन्न करने का प्रयास किया गया।

तीसरा उद्देश्य सामाजिक और आर्थिक असमानताओं को कम करना था। इसके लिए आय और संपत्ति के वितरण में संतुलन लाने की नीतियाँ अपनाई गईं। शिक्षा और स्वास्थ्य सेवाओं का विस्तार करके समाज के कमजोर वर्गों को सशक्त बनाने का प्रयास किया गया।

इसके अतिरिक्त, आत्मनिर्भरता भी एक प्रमुख लक्ष्य था। भारत विदेशी सहायता और आयात पर निर्भरता कम करना चाहता था। इसलिए घरेलू उत्पादन को बढ़ावा देने और स्वदेशी उद्योगों को विकसित करने पर विशेष ध्यान दिया गया।

1.4 समालोचनात्मक दृष्टिकोण और अध्ययन की प्रासंगिकता

यद्यपि आर्थिक नियोजन को भारत के विकास का आधार माना गया, फिर भी इसके संबंध में विभिन्न विद्वानों के बीच मतभेद देखने को मिलते हैं। कुछ विद्वानों का मानना है कि नियोजन ने भारत को एक मजबूत आर्थिक आधार प्रदान किया और देश को आत्मनिर्भर बनने में सहायता की। वहीं, अन्य विद्वान इसकी सीमाओं और कमियों पर प्रकाश डालते हैं।

आलोचकों के अनुसार, योजनाओं के कार्यान्वयन में अक्सर देरी, भ्रष्टाचार और प्रशासनिक अक्षमता जैसी समस्याएँ सामने आईं, जिससे अपेक्षित परिणाम प्राप्त नहीं हो सके। इसके अतिरिक्त, नियोजन की प्रक्रिया कई बार अत्यधिक केंद्रीकृत रही, जिससे स्थानीय आवश्यकताओं की उपेक्षा हुई।

फिर भी, आर्थिक नियोजन की प्रासंगिकता को नकारा नहीं जा सकता। यह भारत के विकास की प्रारंभिक अवस्था में एक आवश्यक कदम था, जिसने देश को एक संगठित दिशा प्रदान की। वर्तमान संदर्भ में भी, जब भारत वैश्विक अर्थव्यवस्था का हिस्सा बन चुका है, नियोजन की अवधारणा विभिन्न रूपों में प्रासंगिक बनी हुई है।

इस प्रकार, प्रस्तुत अध्ययन न केवल आर्थिक नियोजन के ऐतिहासिक और वैचारिक पहलुओं का विश्लेषण करता है, बल्कि इसके प्रभावों और सीमाओं का भी समालोचनात्मक मूल्यांकन प्रस्तुत करता है, जिससे भारत के आर्थिक विकास की व्यापक समझ विकसित की जा सके।

2. साहित्य समीक्षा

अमर्त्य सेन (1999) ने अपनी कृति में विकास को केवल आय और उत्पादन वृद्धि तक सीमित न मानते हुए इसे स्वतंत्रता के विस्तार के रूप में परिभाषित किया है। उनके अनुसार आर्थिक नियोजन का वास्तविक उद्देश्य मानव क्षमताओं का विकास होना चाहिए। उन्होंने यह तर्क दिया कि शिक्षा, स्वास्थ्य और सामाजिक सुरक्षा में निवेश के बिना आर्थिक विकास अधूरा है। इस दृष्टिकोण से भारत की नियोजन प्रक्रिया को मानव विकास की दिशा में एक महत्वपूर्ण प्रयास माना जा सकता है, हालांकि इसके परिणाम असमान रहे हैं।

बिपन चंद्र (2009) ने भारत के स्वतंत्रता संग्राम और उसके आर्थिक प्रभावों का विश्लेषण करते हुए बताया कि औपनिवेशिक शासन ने भारतीय अर्थव्यवस्था को गहराई से प्रभावित किया। उन्होंने यह स्पष्ट किया कि स्वतंत्रता के बाद नियोजन को अपनाना एक ऐतिहासिक आवश्यकता थी। उनके अनुसार पंचवर्षीय योजनाएँ भारत को आत्मनिर्भर बनाने की दिशा में एक संगठित प्रयास थीं, जिन्होंने प्रारंभिक वर्षों में आर्थिक स्थिरता प्रदान की।

रामचंद्र गुहा (2007) ने स्वतंत्रता के बाद भारत के सामाजिक और राजनीतिक विकास का विश्लेषण करते हुए आर्थिक नियोजन को राष्ट्र निर्माण की प्रक्रिया का अभिन्न अंग बताया। उन्होंने यह उल्लेख किया कि योजनाओं के माध्यम से सरकार ने शिक्षा, स्वास्थ्य और आधारभूत संरचना के विकास में महत्वपूर्ण निवेश किया। हालांकि उन्होंने यह भी स्वीकार किया कि इन योजनाओं का लाभ सभी वर्गों तक समान रूप से नहीं पहुँच पाया।

कौशिक बसु (2010) ने आर्थिक नीतियों के नैतिक और संस्थागत पहलुओं पर प्रकाश डालते हुए यह तर्क दिया कि नियोजन के दौरान पारदर्शिता और उत्तरदायित्व का अभाव कई समस्याओं का कारण बना। उन्होंने यह सुझाव दिया कि आर्थिक विकास के लिए संस्थागत सुधार आवश्यक हैं। उनके अनुसार भारत में नियोजन की सफलता काफी हद तक प्रशासनिक दक्षता पर निर्भर रही है।

जगदीश भगवती (2004) ने वैश्वीकरण और उदारीकरण के पक्ष में तर्क प्रस्तुत करते हुए कहा कि अत्यधिक राज्य नियंत्रण आर्थिक विकास में बाधा बन सकता है। उन्होंने भारत की प्रारंभिक नियोजन प्रणाली की आलोचना करते हुए यह कहा कि इससे प्रतिस्पर्धा और नवाचार को सीमित किया गया। उनके अनुसार उदारीकरण के बाद भारत की अर्थव्यवस्था में उल्लेखनीय सुधार हुआ।

अरविंद पनागरिया (2008) ने भारत की आर्थिक प्रगति का विश्लेषण करते हुए यह बताया कि नियोजन के प्रारंभिक चरणों में विकास की गति धीमी थी। उन्होंने यह तर्क दिया कि उदारीकरण के बाद बाजार आधारित नीतियों ने आर्थिक वृद्धि को तेज किया। उनके अनुसार नियोजन और बाजार तंत्र के बीच संतुलन आवश्यक है।

मोंटेक सिंह अहलूवालिया (2002) ने आर्थिक सुधारों की प्रक्रिया का विश्लेषण करते हुए यह बताया कि नियोजन प्रणाली में कई संरचनात्मक कमियाँ थीं। उन्होंने यह सुझाव दिया कि योजनाओं को अधिक लचीला और परिणामोन्मुखी बनाया जाना चाहिए। उनके अनुसार 1991 के बाद किए गए सुधारों ने आर्थिक विकास को नई दिशा दी।

थॉमस मेटकाफ (1995) ने औपनिवेशिक विचारधाराओं का विश्लेषण करते हुए यह बताया कि भारत की आर्थिक संरचना पर औपनिवेशिक नीतियों का गहरा प्रभाव पड़ा। उन्होंने यह निष्कर्ष निकाला कि स्वतंत्रता के बाद नियोजन को अपनाना एक तार्किक कदम था, जिससे आर्थिक पुनर्निर्माण संभव हुआ।

सुगाता बोस (2015) ने आधुनिक दक्षिण एशिया के आर्थिक और सामाजिक विकास का अध्ययन करते हुए यह बताया कि भारत में नियोजन ने क्षेत्रीय असमानताओं को कम करने का प्रयास किया। हालांकि उन्होंने यह भी उल्लेख किया कि इन प्रयासों के बावजूद असमानताएँ पूरी तरह समाप्त नहीं हो सकीं।

प्रणब बर्धन (1998) ने भारत में आर्थिक सुधारों का विश्लेषण करते हुए यह तर्क दिया कि नियोजन प्रणाली में राजनीतिक हस्तक्षेप और प्रशासनिक अक्षमताएँ प्रमुख बाधाएँ थीं। उन्होंने यह सुझाव दिया कि आर्थिक नीतियों को अधिक पारदर्शी और उत्तरदायी बनाया जाना चाहिए।

टी. एन. श्रीनिवासन (2001) ने भारत की आर्थिक नीतियों का विश्लेषण करते हुए यह बताया कि नियोजन प्रणाली ने प्रारंभिक वर्षों में औद्योगिक आधार तैयार करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई। हालांकि उन्होंने यह भी कहा कि समय के साथ इसमें सुधार की आवश्यकता महसूस हुई।

दीपक नायर (2006) ने वैश्वीकरण के संदर्भ में भारत की आर्थिक नीतियों का विश्लेषण करते हुए यह बताया कि नियोजन प्रणाली ने देश को प्रारंभिक स्थिरता प्रदान की। उनके अनुसार उदारीकरण के बाद भारत ने वैश्विक अर्थव्यवस्था में अपनी स्थिति मजबूत की।

इस साहित्य समीक्षा से यह स्पष्ट होता है कि भारत में आर्थिक नियोजन को लेकर विभिन्न दृष्टिकोण मौजूद हैं। कुछ विद्वान इसे विकास का आधार मानते हैं, जबकि अन्य इसकी सीमाओं और चुनौतियों पर जोर देते हैं।

तालिका १: साहित्य समीक्षा का सारांश और मुख्य निष्कर्ष

क्रम संख्या	लेखक एवं प्रकाशन वर्ष	अध्ययन का मुख्य विषय	प्रमुख निष्कर्ष
1	अमर्त्य सेन (1999)	मानव विकास और स्वतंत्रता	विकास को स्वतंत्रता के विस्तार के रूप में देखा गया तथा शिक्षा, स्वास्थ्य और सामाजिक सुरक्षा को अनिवार्य बताया गया
2	बिपन चंद्र (2009)	औपनिवेशिक प्रभाव और नियोजन	नियोजन को स्वतंत्रता के बाद आर्थिक पुनर्निर्माण के लिए आवश्यक बताया गया
3	रामचंद्र गुहा (2007)	राष्ट्र निर्माण और विकास	आर्थिक नियोजन को राष्ट्र निर्माण का महत्वपूर्ण उपकरण माना, परंतु लाभ का असमान वितरण दर्शाया
4	कौशिक बसु (2010)	संस्थागत ढांचा और नीति	पारदर्शिता और उत्तरदायित्व की कमी को प्रमुख समस्या बताया तथा संस्थागत सुधारों पर बल दिया
5	जगदीश भगवती (2004)	वैश्वीकरण और उदारीकरण	अत्यधिक राज्य नियंत्रण को विकास में बाधा माना और उदारीकरण को प्रोत्साहन दिया
6	अरविंद पनागरिया (2008)	आर्थिक वृद्धि और बाजार	प्रारंभिक नियोजन को धीमा बताया तथा उदारीकरण के बाद वृद्धि में तेजी को रेखांकित किया
7	मोंटेक सिंह	आर्थिक सुधार	नियोजन प्रणाली की संरचनात्मक कमियों को

	अहलूवालिया (2002)		उजागर किया और लचीलेपन की आवश्यकता बताई
8	थॉमस मेटकाफ (1995)	औपनिवेशिक विचारधारा	औपनिवेशिक नीतियों के प्रभाव को दर्शाते हुए नियोजन को तार्किक कदम बताया
9	सुगाता बोस (2015)	क्षेत्रीय विकास	नियोजन द्वारा असमानताओं को कम करने का प्रयास, परंतु पूर्ण सफलता नहीं
10	प्रणब बर्धन (1998)	राजनीतिक अर्थव्यवस्था	राजनीतिक हस्तक्षेप और प्रशासनिक अक्षमता को प्रमुख बाधा बताया
11	टी. एन. श्रीनिवासन (2001)	औद्योगिक विकास	प्रारंभिक नियोजन को औद्योगिक आधार निर्माण में सहायक माना
12	दीपक नायर (2006)	वैश्वीकरण और नीति	नियोजन से स्थिरता प्राप्त हुई तथा उदारीकरण से वैश्विक स्थिति मजबूत हुई

निष्कर्ष

स्वतंत्रता के पश्चात भारत में आर्थिक नियोजन ने राष्ट्र निर्माण की प्रक्रिया में एक केंद्रीय भूमिका निभाई। इसने देश को एक संगठित विकास दिशा प्रदान की, जिसके माध्यम से कृषि, उद्योग, शिक्षा और आधारभूत संरचना के क्षेत्रों में महत्वपूर्ण प्रगति संभव हुई। पंचवर्षीय योजनाओं ने संसाधनों के समुचित आवंटन और दीर्घकालिक लक्ष्यों की प्राप्ति में सहायता की। विशेष रूप से प्रारंभिक चरणों में नियोजन ने औद्योगिक आधार स्थापित करने और खाद्य सुरक्षा सुनिश्चित करने में महत्वपूर्ण योगदान दिया।

हालांकि, नियोजन प्रणाली पूर्णतः सफल नहीं रही। प्रशासनिक अक्षमता, संसाधनों की कमी, नीतियों के क्रियान्वयन में विलंब तथा क्षेत्रीय और सामाजिक असमानताओं के बने रहने जैसी समस्याएँ इसकी प्रमुख सीमाएँ रहीं। इसके अतिरिक्त, अत्यधिक राज्य नियंत्रण ने कई बार निजी क्षेत्र की संभावनाओं को सीमित किया। 1991 के आर्थिक सुधारों के पश्चात भारत ने बाजार आधारित नीतियों को अपनाया, जिससे विकास की गति में उल्लेखनीय वृद्धि हुई।

अतः यह निष्कर्ष निकाला जा सकता है कि आर्थिक नियोजन भारत के विकास का एक महत्वपूर्ण आधार रहा है, किंतु इसके प्रभाव को समझने के लिए इसकी उपलब्धियों और सीमाओं दोनों का समालोचनात्मक विश्लेषण आवश्यक है। भविष्य में संतुलित और समावेशी विकास के लिए नियोजन और बाजार तंत्र के बीच समन्वय अत्यंत आवश्यक होगा।

संदर्भ सूची

1. सेन, अ. (1999). *Development as Freedom*. ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस।
2. चंद्र, ब. (2009). *India's Struggle for Independence*. पेंगुइन बुक्स।
3. गुहा, र. (2007). *India After Gandhi*. पिकाडोर।
4. बसु, क. (2010). *Beyond the Invisible Hand*. प्रिंसटन यूनिवर्सिटी प्रेस।
5. भगवती, ज. (2004). *In Defense of Globalization*. ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस।
6. पनागरिया, अ. (2008). *India: The Emerging Giant*. ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस।
7. अहलूवालिया, म. स. (2002). Economic reforms in India since 1991. *Journal of Economic Perspectives*, 16(3), 67–88।
8. मेटकाफ, ट. र. (1995). *Ideologies of the Raj*. कैम्ब्रिज यूनिवर्सिटी प्रेस।
9. बोस, स. (2015). *Modern South Asia*. रूटलेज।
10. बर्धन, प. (1998). *The Political Economy of Development in India*. ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस।
11. श्रीनिवासन, टी. न. (2001). Economic reforms and global integration. *Journal of Economic Perspectives*, 15(2), 3–20।
12. नायर, द. (2006). India's globalization: Evaluating the economic consequences. *Development and Change*, 37(5), 1023–1045।